लघु शान्ति विधान

(नवदेव पूजन विधान)

- राजमल पवैया

लघु शान्ति विधान

(नवदेव पूजन-विधान)

रचयिता :

कविवर राजमल पवैया

भोपाल (म.प्र.)

प्रकाशक :

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन : 0141-2707458, 2705581

000000 : 0000000000@00000.000

प्रथम तीन संस्करण : 6,000
(16 सितम्बर, 2007 से अद्यतन)
द्वितीय संस्करण : 2,000
(25 दिसम्बर, 2009)
योग : 8,000

मूल्य : 6 रुपये

मुद्रक :
प्रिन्ट 'ओ' लैण्ड,
बाईस गोदाम, जयपुर

प्रकाशकीय

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन प्रारंभ से ही पूजन-विधान सम्बन्धी साहित्य के प्रकाशन में विशेष रुचि लेता रहा है, अतः उसी क्रम में कविवर राजमलजी पवैया द्वारा रचित 'लघु शान्ति विधान' का प्रकाशन करते हुए हमें विशेष हर्ष हो रहा है।

जैन समाज में अनेक विशेष अवसरों पर शान्ति विधान का आयोजन किया जाता है, लेकिन उन अवसरों पर समय की मर्यादा का भी ध्यान रखना पड़ता है, अतः शान्ति विधान (नवदेव पूजन-विधान) को भी यह संक्षिप्त स्वरूप कविवर राजमलजी पवैया ने ही प्रदान किया है, एतदर्थ हम उनके आभारी हैं।

प्रस्तुत कृति के प्रकाशन का दायित्व सदा की भाँति प्रकाशन विभाग के प्रभारी श्री अखिल बंसल ने बखूबी सम्हाला है तथा शुद्ध मुद्रण हेतु प्रूफरीडिंग के कार्य में श्री शान्तिकुमारजी पाटील ने अपना विशेष सहयोग प्रदान किया है अतः ये सभी महानुभाव धन्यवाद के पात्र हैं।

इस कृति के माध्यम से हमारे आराध्य नवदेवों की आराधनापूर्वक हम स्वयं भी शीघ्र ही अपना कल्याण करें यही मंगल भावना है।

– परमात्मप्रकाश भारिल्ल
महामंत्री
अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन

ॐ

लघु शान्ति विधान

मंगलाचरण

(अनुष्टुप)

अर्हन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो नमः ।
जिनालय-जिनबिम्ब-जिनश्रुत-जिनधर्मेभ्यो नमः ।।

(सग्विणी)

परम-शान्ति-विधायकम्, परिपूर्ण-सौख्य-प्रदायकम् ।
मंगलोत्तम-शरण-जगति, देव-नव-मंगलमयम् ।।

(दिक्)

अरहन्त देव वन्दूँ, मैं सर्व सिद्ध वन्दूँ ।
आचार्य देव वन्दूँ, उवझाय सर्व वन्दूँ ।।
मुनिराज सर्व वन्दूँ, जिन चैत्यालय वन्दूँ ।
जिनबिम्ब-धर्म-वाणी, सब देव सदा वन्दूँ ।।
अरहन्द देव मंगल, हैं सिद्ध श्रेष्ठ मंगल ।
आचार्य देव मंगल, उवझाय सर्व मंगल ।
जिन चैत्य धर्म मंगल, ॐकारनाद मंगल ।।
अरहन्त देव उत्तम, हैं सिद्ध श्रेष्ठ उत्तम ।
आचार्य देव उत्तम, उवझाय सर्व उत्तम ।।
मुनिराज सर्व उत्तम, जिन चैत्यालय उत्तम ।
जिन चैत्य धर्म उत्तम, ॐकारनाद उत्तम ।।
अरहन्त शरण जाऊँ, मैं सिद्ध शरण पाऊँ ।
आचार्य शरण जाऊँ, उवझाय शरण पाऊँ ।।
मुनिराज शरण जाऊँ, जिन चैत्यालय जाऊँ ।
जिन चैत्य धर्म शरणा, ॐकारनाद पाऊँ ।।

(हरिगीत)

प्रभो शान्तिविधान करने, का हृदय में भाव है।
जान लूँ मैं आत्मा जो, स्वयं शान्त स्वभाव है।।
पंचपरमेष्ठी जिनालय, और जिनप्रतिमा परम।
मात जिनवाणी सुपावन, तथा उत्तम जिनधरम।।
सभी को वन्दन करूँ मैं, सभी की पूजन करूँ।
महा शान्ति अपूर्व पाऊँ, कर्म के बन्धन हरूँ।।
पूज्य श्री नवदेवताओं, को करूँ सादर नमन।
भेद-ज्ञान जगा मिटाऊँ, जन्म और जरा-मरन।।

(वीर)

ॐ ह्रीं श्री पंच परम परमेष्ठी, परम पूज्य भगवान।
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, तीर्थंकर चौबीस महान।।
सीमन्धर युगमन्धर आदिक, विद्यमान तीर्थंकर बीस।
जिनमन्दिर जिनप्रतिमा जिनवाणी, जिनधर्म झुकाऊँ शीश।।
महाशक्ति मंगल के दाता, हरो अमंगल हे जगदीश।
भाव-द्रव्य से पूजन करके, शान्ति प्राप्त कर लूँ हे ईश!।।
भेदज्ञान की अनुपम निधि दो, समकित रवि का करो प्रकाश।
जिनदर्शन से निजदर्शन, पाने का जागा है उल्लास।।
भव-रोगों से अतिव्याकुल हूँ, मिथ्याभ्रम का करो विनाश।
आत्मशान्ति के हेतु शरण, आया हूँ ले पूरा विश्वास।।
आह्वानन मैं नहीं जानता, सुस्थापन भी लेश नहीं।
सन्निधिकरण न जानूँ स्वामी, मात्र आपकी शरण गही।।
पूर्ण भक्ति से नमन करूँ मैं, विनय करूँ प्रभु बारम्बार।
महाशान्ति के रथ पर चढ़कर, हो जाऊँ भवसागर पार।।

(दोहा)

शान्ति-प्रदायक देव नव, आओ हृदय मँझार।
नित प्रति अन्तर में बसो, पाऊँ भव-दधिपार।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

स्थापना

(गीतिका)

अरहन्त सिद्धाचार्य पाठक, साधु जिनप्रतिमा महान ।
जिनालय जिनध्वनि तथा, जिनधर्म है जग में प्रधान ।।
यही हैं नवदेव पावन, सकल दुःखहर्ता सदा ।
परम शिवसुख शान्तिदाता, करूँ पूजन सर्वदा ।।
विनय से वन्दन करूँ नित, हृदय से ध्याऊँ प्रभो ।
तत्त्वज्ञान महान पाकर, शान्ति पाऊँ हे विभो ।।
जान कर नवदेव उत्तम, चरण इनके उर धरूँ ।
मुक्ति के पथ पर चलूँ मैं, कर्म के बन्धन हरूँ ।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवगर्भित-अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनालय-जिनप्रतिमा-जिनवाणी-जिनधर्माः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्री श्री नवदेवगर्भित-अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनालय- जिनप्रतिमा-जिनवाणी-जिनधर्माः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवगर्भित-अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनालय-जिनप्रतिमा-जिनवाणी-जिनधर्माः!
अत्र मम् सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

(वीरछन्द)

सविनय क्षीरोदधि का प्रासुक, जल चरणाग्र चढ़ाऊँ आज ।
जन्म-जरा-मरणादि दोष हर, पाऊँ शाश्वत निज पदराज ।।
पाँचों परमेष्ठी जिनमन्दिर, जिनप्रतिमा जिनश्रुत जिनधर्म ।
नवदेवों को वन्दन करके, हे प्रभु! हो जाऊँ निष्कर्म ।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मेरु सुदर्शन भद्रशालवन से लाऊँ शीतल चन्दन ।
भवाताप-ज्वर नाश करूँ, बनकर सिद्धों का लघुनन्दन ।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

विजयमेरु के नन्दनवन से, अक्षत लाऊँ धवलोज्ज्वल।
अक्षयपद की प्राप्ति हेतु मैं, ध्याऊँ निजस्वभाव निर्मल।।
पाँचों परमेष्ठी जिनमन्दिर, जिनप्रतिमा जिनश्रुत जिनधर्म।
नवदेवों को वन्दन करके, हे प्रभु! हो जाऊँ निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु–सौमनस सुवन से, विविध पुष्प लाऊँ मनहर।
कामबाण विध्वंस हेतु, धारूँ उर महाशील शिवकर।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दरमेरु–पाण्डुकवन जा, अनुभव रस चरु निर्मित कर।
क्षुधारोग की पीर मिटाऊँ, अनाहार निजपद पाकर।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नेवैद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्मालीमेरु निकट जा, दीपक लाऊँ ज्ञानमयी।
महामोह मिथ्यात्व तिमिर हर, हो जाऊँ निजध्यानमयी।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मानुषोत्तर पर्वत पर जा, ध्यान धरूँगा धर्ममयी।
निज शुद्धोपयोग के बल से, हो जाऊँ वसु कर्मजयी।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु के कुलवृक्षों से, रस वाले फल लाऊँ आज।
शाश्वत महामोक्ष फल पाऊँ, गुण अनन्त प्रगटा जिनराज।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु के वक्षारों पर, अर्घ्य बनाऊँ भली प्रकार।
पद अनर्घ्य ध्रुवधामी पाऊँ, हो जाऊँ भवसागर पार।।पाँचो.।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

(हरिगीत)

संचिता भव–वासना का, अन्त करना चाहिए।
अब कषायी भाव को, सम्पूर्ण हरना चाहिए।।
जानकर सामान्य छह गुण, ध्यान अपना कीजिए।
जो कि चार अभाव है, उनको हृदय में लीजिए।।

शुद्ध षट्कारक सदा ही, प्राप्त करना चाहिए।
संचिता भव-वासना का, अन्त करना चाहिए।।
संग सामग्री यही, शिवमार्ग पर लेकर चलो।
ज्ञान की दृढ़ भावना ले, कर्म कालुषता दलो।।
अब हमें सिद्धत्व की ही, प्राप्ति करना चाहिए।
संचिता भव-वासना का, अन्त करना चाहिए।।

(दोहा)

महा-अर्घ्य अर्पण करूँ, श्री नवदेव महान।
परम शान्ति की प्राप्ति हित, करूँ आपका ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(मानव)

अन्तर्मन शुद्ध न हो तो, समकित कैसे पायेंगे।
बिन सम्यग्दर्शन चेतन, सत्पथ पर कब आयेंगे।।
बिन समकित जप तप संयम, लेकर अनन्त भव धारे।
फिर भी न लाभ कुछ पाया, पाये भव के अँधियारे।।
समकित बिन रत्नत्रय का, पाना है पूर्ण असम्भव।
अन्तर्मन शुद्ध अगर है तो, समकित पाना सम्भव।।
पहले तत्त्वाभ्यास कर, फिर तत्त्वों का निर्णय कर।
उर भेदज्ञान प्रगटा कर, सम्यग्दर्शन उर में धर।।
आत्मानुभूति बिन निश्चय, समकित न कभी मिलता है।
बिन समकित ज्ञानचरित भी, उर में न कभी झिलता है।।
जब मुझको श्रद्धा हो उर, निज का हो ज्ञान सुसम्यक्।
चारित्र सहज मिलता है, शिवपथ मिलता है सम्यक्।।
ये ही रत्नत्रय पावन है, मोक्षमार्ग का दाता।
फिर पूर्ण देशसंयम भी, स्वयमेव हृदय में आता।।

संयम का भाव जागते ही, चेतन शुद्ध होता।
चौकड़ी कषाय तीन को, हर कर यह जिनमुनि होता।।
समकित पाते ही सिद्धों, का लघुनन्दन बन जाता।
रागों के महल गिराता, आगे ही बढ़ता जाता।।
निश्चय संयम पाते ही, सिद्धों समान लगता है।
इसका पुरुषार्थ देखकर, चारित्रमोह भगता है।।
फिर घातिकर्म क्षय होते ही, केवलरवि उर आता है।
अर्हन्तदशा मिलती है, सर्वस्व स्वपद पाता है।।
अतएव आज ही अपना, अन्तर्मन शुद्ध करें हम।
मिथ्यात्व मोह रागादि भावों, को पूर्ण हरें हम।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

नवदेवों का ध्यान कर, करूँ स्व-पर कल्याण।
रत्नत्रय की भक्ति से, पाऊँ पद निर्वाण।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अर्घ्यावली

अरहन्त परमेष्ठी को अर्घ्य

(चान्द्रायण)

सकल ज्ञेय के ज्ञायक श्री अरहन्त हैं।
छियालीस गुणधारी प्रभु भगवन्त हैं।।
दोष अठारह रहित नाथ हैं सर्वथा।
युगपत् लोकालोक जानते हैं तथा।।
अरहन्तों को नमन करूँ मैं भाव से।
रागत्याग जुड़ जाऊँ शुद्धस्वभाव से।।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र-भक्ति उर हो सदा।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री षट्चत्वारिंशत्गुणमण्डित-अरहन्तपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निं. स्वा.।

सिद्ध परमेष्ठी को अर्घ्य

गुण अनन्त के स्वामी सिद्धों को नमन।
मुख्य अष्ट गुणधारी प्रभुओं को नमन।।
त्रिलोकाग्र पर सिद्ध शिलापति आप हो।
निजानन्द रसलीन स्वज्ञायक आप हो।।
सिद्धचक्र सम्बन्धित सिद्ध महान हो।
तीन लोक में तुम ही श्रेष्ठ प्रधान हो।।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र-भक्ति उर हो सदा।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टगुणमण्डित-सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य परमेष्ठी को अर्घ्य

आचार्यों को भावसहित मेरा नमन।
ऋषि-मुनि-यति-अनगार संघ चउपति नमन।।
है छत्तीस गुणों के धारी सर्वदा।
पंचाचार पालते स्वामी सर्वदा।।
आचार्यों को विनय सहित वन्दन करूँ।
महामोह मिथ्यात्व तिमिर पूरा हरूँ।।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र-भक्ति उर हो सदा।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री षट्त्रिंशत्गुणमण्डित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपाध्याय परमेष्ठी को अर्घ्य

उपाध्याय गुरुवर श्रुतज्ञान प्रधान हैं।
ग्यारह अंग पूर्व चौदह का ज्ञान है।।
है पच्चीस गुणों से शोभित सर्वदा।
यति-मुनियों को आप पढ़ाते हैं सदा।।
उपाध्याय गुरुओं को मैं वन्दन करूँ।
जो भी है अज्ञान उसे पूरा हरूँ।।

दर्शन-ज्ञान-चारित्र-भक्ति उर हो सदा।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री पंचविंशतिगुणमण्डित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधु परमेष्ठी को अर्घ्य

पंचमहाव्रत पंचसमिति पालक सुमुनि।
षट् आवश्यक पंचेन्द्रिय वश हैं सुमुनि।।
शेष सात गुण से मुनि हैं शोभायमान।
अट्ठाईस मूलगुण हैं मुनि के महान।।
ढाईद्वीप में भावलिंग मुनि हैं सदा।
त्रय कम नव करोड़ मुनि रहते सर्वदा।।
सर्वसाधु मुनियों को नित वन्दन करूँ।
मैं भी मुनि होऊँ यह भाव हृदय धरूँ।।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र-भक्ति उर हो सदा।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविंशतिगुणमण्डित-साधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्तमान चौबीसी को अर्घ्य

(चौपाई)

भरतक्षेत्र के वर्तमान प्रभु, चौबीसों तीर्थेश महाविभु।
ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पद्मप्रभ सुपार्श्व वन्दन।।
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य श्री विमल अनन्त जिन।
धर्म शान्ति श्री कुन्थु अरह प्रभु, मल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि विभु।।
पार्श्वनाथ श्री महावीर जय, शिवसुख कर्त्ता प्रभु मंगलमय।
परम शान्ति सुखदाता स्वामी, भवदुःख नाशो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री भरतक्षेत्रस्थ वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्यलोक में ढाईद्वीप के अस्सी पंचमेरु जिनालयों को अर्घ्य

(वीर)

तीन लोक में मध्यलोक हैं, इसमें ढाईद्वीप महान।
जम्बू-धातकी-पुष्करार्ध में, पाँच मेरु हैं शोभावान।।

मेरु सुदर्शन–विजय–अचल–मन्दर–विद्युन्माली अभिराम।
सबमें चार–चार वन सुन्दर, जिनमें चार–चार जिनधाम।।
सब मिल अस्सी जिनगृह इनमें, इक शत वसु प्रतिमा शोभित।
इन्द्रादिक सुर–नर–मुनि जाते, दर्शन कर होते मोहित।।
सभी अकृत्रिम चैत्यालय हैं, इनमें इक शत वसु जिनबिम्ब।
मैं भी दर्शन इनके करके, इनमें देखूँ निज प्रतिबिम्ब।।
इन सबको मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ, विनयभाव से भक्तिसहित।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी, हो जाऊँ परभाव रहित।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीतिजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु सम्बन्धी बीस गजदन्त जिनालयों को अर्घ्य

पंचमेरु सम्बन्धी हैं, विदिशाओं में गजदन्त सुबीस।
एक–एक में एक जिनालय, सब मिल बीस जिनगृह ईश।।
सभी अकृत्रिम जिनमन्दिर हैं, तथा अकृत्रिम जिनप्रतिमा।
जो भी इनको वन्दन करते, पाते हैं निजपद महिमा।।
मैं भी भावसहित गजदन्तों के, जिनमन्दिर को करूँ नमन।
परम शान्ति का सिन्धु प्राप्त कर, निजस्वरूप में रहूँ मगन।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धिविंशति गजदन्तजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु सम्बन्धी अस्सी वक्षार जिनालयों को अर्घ्य

एक मेरु सम्बन्धी हैं, वक्षार सुपर्वत सोलह महान।
पंचमेरु सम्बन्धी हैं, वक्षार अस्सी अति महिमावान।।
एक–एक पर एक जिनालय, स्वर्णमयी बहु सुन्दर हैं।
सब मिल अस्सी जिनगृह इनमें, जिनप्रतिमाएँ अति मनहर हैं।।
इन सबको मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ, विनय सहित करके वन्दन।
परम शान्ति सुख पाऊँ स्वामी, पाऊँ शाश्वत मुक्ति सदन।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धिअशीतिवक्षारस्थ जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु के देवकुरू-उत्तरकुरू भोगभूमिसम्बन्धी दशकुलवृक्ष-जिनालयों को अर्घ्य

पंचमेरु के दो-दो जम्बू-शाल्मलि-धातकी-पुष्कर वृक्ष।
चैत्यवृक्ष जिनगृह मैं वन्दूँ, होऊँ आत्मज्ञान में दक्ष।।
पृथ्वीकायिक वृक्ष सभी हैं, यही जान कर हर्षाऊँ।
परम शान्ति हित अर्घ्य चढ़ाऊँ, विनयभाव उर में लाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री पञ्चमेरुसम्बन्धिदशकुलवृक्षजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु सम्बन्धी एकसौसत्तर विजयार्ध (वैताढ्य) जिनालयों को अर्घ्य

एक मेरु चौंतीस गिरि, विजयार्ध क्षेत्र बत्तीस विदेह।
भरतैरावत एक-एक हैं, भावसहित निरखूँ धर नेह।।
विदेहक्षेत्र सम्बन्धी इक शत, साठ शृंग विजयार्ध महान।
पंचैरावत पंचभरत के, दस विजयार्ध सुपर्वत जान।।
सब मिल एक शतक सत्तर, विजयार्ध रजतगिरि ढाईद्वीप।
इन पर एक-एक चैत्यालय, जो भव्यों के हृदय समीप।।
सब मिल एक शतक सत्तर, चैत्यालय स्वर्णमयी वन्दूँ।
परम शान्ति पाऊँ हे स्वामी, निजस्वभाव को अभिनन्दूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-विजयार्धक्षेत्रस्थसप्तत्यधिक-एकशतक जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धातकीखण्ड एवं पुष्करार्ध-सम्बन्धी चार इष्वाकार जिनालयों को अर्घ्य

द्वीप धातकी दक्षिण-उत्तर, दो हैं इष्वाकार महान।
पुष्पकरार्ध में दक्षिण-उत्तर, दो हैं इष्वाकार प्रधान।।
एक उदधि से द्वितीय उदधि तक, होता है इनका विस्तार।
जिन आगम करणानुयोग का, ज्ञान करूँ जो अगम अपार।।
ये सब चार जिनालय, इष्वाकार परम सुन्दर पावन।
विनय भाव से शान्ति प्राप्ति हित, वन्दूँ सादर मन-भावन।।

ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्ड-पुष्करार्धसम्बन्धी इष्वाकार चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु सम्बन्धी तीस कुलाचल जिनालयों को अर्घ्य

एक मेरु सम्बन्धी पर्वत, नाम कुलाचल षट् अभिराम।
हिमवन–महाहिमवन–निषध, अरु नील–रुक्मि–शिखरी है नाम।।
स्वतः व्यवस्थित दक्षिण दिशि से, दक्षिण से उत्तर तक तीन।
भरत–हैमवत–हरि–सुनाम है, इन क्षेत्रों के जो हैं तीन।।
गिरि सुमेरु से उत्तर दिशि में, दक्षिण से उत्तर तक तीन।
रम्यक् अरु हिरण्यवत अरु, ऐरावत क्षेत्र नाम यह तीन।।
इनके मध्य कुलाचल शोभित, पंचमेरु सम्बन्धी तीस।
इन पर एक–एक जिनमन्दिर, जिनमें शोभित हैं जगदीश।।
इन सबको मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ, विनयभाव से त्रिभुवननाथ।
जब तक परम शान्ति नहीं पाऊँ, तजूँ न तुम चरणों का साथ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–त्रिंशतकुलाचलस्थित–जिनालयेभ्योऽर्घ्यं स्वाहा।

मानुषोत्तर–सम्बन्धी चार जिनालयों को अर्घ्य

ढाईद्वीप की अन्तिम सीमा, मानुषोत्तर पर्वत ख्यात।
आगे गमन नहीं मनुजों का, जिन–आगम कथनी विख्यात।।
इन पर चार जिनालय चारों, दिशि में शोभित हैं पावन।
परम शान्ति की धारा पाऊँ, यही विनय है मन–भावन।।

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वत–सम्बन्धि–चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अष्टम नन्दीश्वरद्वीप के बावन जिनालयों को अर्घ्य

(ताटंक)

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर, चारों दिशि में चार सुवन।
एक–एक में तेरह–तेरह जिनगृह सुन्दर मन भावन।।
अंजनगिरि हैं कृष्णवर्ण के, इनके चार जिनालय भव्य।
सोलह दधिमुख श्वेतवर्ण के, सोलह चैत्यालय अति दिव्य।।
रतिकर पर्वत लालवर्ण के, हैं बत्तीस जिनालय श्रेष्ठ।
सब मिल बावन जिनगृह वन्दूँ, तज संसारभाव सब नेष्ठ।।

अष्टाह्निका पर्व में इन्द्रादिक, सुर आ करते पूजन।
नहीं शक्ति जाने की हममें, अतः यहीं से है वन्दन।।
नाचें गाएँ अर्घ्य चढ़ाएँ, करें भाव से नित्य नमन।
परम शान्ति की धारा पाएँ, पाकर प्रभु सम्यग्दर्शन।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादशम कुण्डलवरद्वीप के चार जिनालयों को अर्घ्य

एकादशम द्वीप कुण्डलवर, चारों दिशि के जिनगृह चार।
विनय भक्ति से वन्दन करके, नाशें सारा राग विकार।।
परम शान्ति का समुद्र पाएँ, गुण अनन्त पाएँ हे देव।
निज पुरुषार्थ शक्ति से हम भी, निजपद पाएँ स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं श्री एकादशम कुण्डलवरद्वीपस्थ चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रयोदशम रुचकवरद्वीप के चार जिनालयों को अर्घ्य

त्रयोदशम है द्वीप रुचकवर, चारों दिशि में जिनगृह चार।
इन्द्रादिक सुर पूजन करते, गाते जिनप्रभु की जयकार।।
द्वीप रुचकवर से आगे, जिन चैत्यालय का पूर्ण अभाव।
मध्यलोक में इसी द्वीप तक, जिनगृह हैं यह वस्तुस्वभाव।।
तेरह द्वीपों के जिनमन्दिर, हमने पूजे भक्तिसहित।
शाश्वत शान्ति सौख्य पाएँ, हम हो जाएँ परभावरहित।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशमरुचकवरद्वीपस्थ चतुर्जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्यलोक के सर्व चार सौ अट्ठावन जिनालयों को अर्घ्य

(ताटंक)

मध्यलोक में चार शतक, अट्ठावन जिनगृह सब पावन।
सर्व अकृत्रिम सादर वन्दूँ, परम शान्ति पाऊँ भगवन्।।
पूर्ण अर्घ्य मैं करूँ समर्पित, अकृत्रिम प्रतिमा वन्दूँ।
निजस्वरूप में ही रम जाऊँ, निजस्वभाव ही अभिनन्दूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकस्थितअष्टपंचाशदधिकचतुशतकजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अधोलोक में भवनवासी देवों के सात करोड़ बहत्तर लाख जिनालयों को अर्घ्य

भवनवासियों के भवनों में, सात करोड़ बहत्तर लाख।
जिन चैत्यालय सभी अकृत्रिम, वन्दूँ नित जिन आगम साख।।
असुरकुमार जाति के देवों के हैं चौंसठ लाख भवन।
नागकुमार जाति के देवों के हैं चौरासी लाख भवन।।
सुपर्णकुमार जाति के देवों के सुबहत्तर लाख भवन।
द्वीपकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।।
उदधिकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।
स्तनितकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।।
विद्युतकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।
दिक्ककुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।।
अग्निकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।
वायुकुमार जाति के देवों के सुछिहत्तर लाख भवन।।
ये सब सात करोड़ बहत्तर लाख जिनालय मनहर हैं।
इनको अर्घ्य समर्पित करने के परिणाम सुसुन्दर हैं।।
अधोलोक के सर्व जिनालय, अकृत्रिम वन्दूँ हे नाथ!।
परम शान्ति के हेतु आपके, चरणों का न तजूँ प्रभु साथ।।

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकस्थित-भवनवासीदेवसम्बन्धि द्विसप्ततिलक्षाधिक-सप्तकोटि-जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यन्तरदेवों के असंख्यात जिनालयों को अर्घ्य

व्यन्तरदेवों के भवनों में, असंख्यात जिनभवन महान।
भावसहित वन्दन करके मैं, करूँ आत्मा का कल्याण।।
अर्घ्य चढ़ाऊँ विनय-भक्ति से, सादर सविनय करूँ प्रणाम।
परम शान्ति की महिमा जागी, अतः शीघ्र पाऊँ ध्रुवधाम।।

ॐ ह्रीं श्री व्यन्तरलोकसम्बन्धि-असंख्यातजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निं. स्वा.।

ज्योतिषी देवों के असंख्यात जिनालयों को अर्घ्य

चन्द्र–सूर्य–नक्षत्र–प्रकीर्णक, तारे आदि ज्योतिषलोक।
इनमें असंख्यात जिनमन्दिर, सबको सविनय दूँ नित धोक।।
इन नवग्रह के सर्व जिनालय, भक्ति भाव से नमन करूँ।
परम शान्ति का सिन्धु प्राप्त कर, मिथ्याभ्रम–तम हनन करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री ज्योतिषलोकसम्बन्धि–असंख्यात–जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ऊर्ध्वलोक में सोलह स्वर्गों के चौरासी लाख छियानवे हजार सात सौ जिनालयों को अर्घ्य

प्रथम स्वर्ग सौधर्म जिनालय, है बत्तीस लाख सुन्दर।
द्वितीय स्वर्ग ईशान जिनालय, अट्ठाईस लाख मनहर।।
तृतीय सनतकुमार स्वर्ग के, बारह लाख जिनालय भव्य।
चतुर्थ-स्वर्ग महेन्द्र मनोहर, आठ लाख जिनालय भव्य।।
पंचम ब्रह्म छठे ब्रह्मोत्तर, के हैं चार लाख विमान।
सप्तम लान्तव अष्टम कापिष्ठ, हैं सहस्र पचास महान।।
नवम शुक्र महाशुक्र दशम के, हैं चालीस हजार प्रधान।
एकादशम शतार द्वादशम, सहस्रार छह सहस्र सुजान।।
तेरह आनत चौदह प्राणत, पन्द्रह आरण भव्य विमान।
सोलह अच्युत इन चारों के, सात शतक जिनगृह छविमान।।
सब मिल लाख चौरासी, छियानवे हजार सात शतक।
परम शान्ति पाने को स्वामी, ध्याऊँ शाश्वत निज आलय।।

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसम्बन्धि–षोडशस्वर्गस्थ सप्तशतकाधिक–षण्णवति सहस्र–चतुरशीतिलक्षजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवग्रैवेयक के तीन सौ नौ जिनालयों को अर्घ्य

नवग्रैवेयक की प्रथमत्रयी के, एक शतक ग्यारह वन्दूँ।
द्वितीयत्रयी के एक शतक, अरु सात जिनालय अभिनन्दूँ।।

तृतीयत्रयी के इक्यानवे, जिनालय नित प्रति करूँ प्रणाम।
सर्व जिनालय तीन शतक नौ, वन्दूँ पाऊँ निज ध्रुवधाम।।

ॐ ह्रीं श्री नवग्रीवकसम्बन्धि-नवाधिकत्रयशतकजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव-अनुदिश के नौ जिनालयों को अर्घ्य

नव अनुदिश का प्रथम जिनालय, है आदित्य नाम विख्यात।
द्वितीय जिनालय अर्चि जाति में, तृतीय अर्चिमालिनी सुख्यात।।
चौथा वैर पाँचवा वैरोचन, छठा सौम्य सप्त सौम्य रूपक सिद्ध।
अष्टम अंक नवम स्फटिक सब, मिल नौ जिनगृह सुप्रसिद्ध।।
नव अनुदिश के देव सभी, दो भव अवतारी होते हैं।
परम शान्ति वे ही पाते हैं, जो जिन-ज्ञान सँजोते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री नवानुदिशस्थित-नवजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच-अनुत्तर के पाँच जिनालयों को अर्घ्य

(रोला)

प्रथम अनुत्तर एक जिनालय विजय जानिये।
द्वितीय अनुत्तर वैजयन्त है एक मानिये।।
तृतीय अनुत्तर जयन्त में भी एक जानिये।
चतुर्थ अपराजित में जिनमन्दिर एक जानिये।।
पंचम भवन सर्वार्थसिद्धि में एक मानिये।
पंचोत्तर के पाँच जिनालय श्रेष्ठ मानिये।।
देव यहाँ के इक भव अवतारी सुजानिये।
तैंतीस सागर आयु सदा ही भव्य जानिये।।

ॐ ह्रीं श्री पंच-अनुत्तरसम्बन्धि-पंचजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्ध्वलोक के सर्व चौरासी लाख सतानवे हजार तेईस जिनालयों को पूर्णार्घ्य

(ताटंक)

स्वर्गादिक ग्रीवक-अनुदिशि, पंचोत्तर के जिन चैत्यालय।
लाख चौरासी सन्तानवे सहस्र, तेईस स्व सौख्यालय।।

ये सब ऊर्ध्वलोक जिनमन्दिर, तीनों लोकों में विख्यात।
भाव-भक्ति से पूजन करते, पाऊँ स्वामी समकित प्रात।।

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसम्बन्धित्रयविंशत्यधिक-सप्तनवतिसहस्रचतुर-शीतिलक्षजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के कुल आठ करोड़ छप्पन लाख सतानवे हजार चार सौ इक्यासी अकृत्रिम जिनालयों को समुच्चय पूर्णार्घ्य

तीन लोक के सर्व अकृत्रिम, जिनभवनों को वन्दन कर।
निज-स्वभाव की ओर लक्ष्य दूँ, सारे ही प्रभु बन्धन हर।।
सर्व जिनालय आठ कोटि अरु, छप्पन लाख महा हितकर।
सन्तानवे सहस्र चार सौ, इक्यासी पूजूँ सुखकर।।
सुखद शान्ति पाऊँ हे स्वामी, यही भावना है निशदिन।
अष्ट कर्म से मुक्त बनूँ मैं, राग-द्वेष नाशूँ गिन-गिन।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसम्बन्धि एकाशीतिचतुःशतकाधिकसप्तनवतिसहस्र षट्-पञ्चाशत्लक्ष-अष्टकोटि-जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के सर्व कृत्रिम जिनालयों को अर्घ्य

जम्बू-धातकी-पुष्करार्ध के, कृत्रिम जिनालय मैं वन्दूँ।
देवों मनुजों द्वारा निर्मित, अनगिनती मन्दिर वन्दूँ।।
मनुजलोक में ही होते हैं, इनको सादर करूँ प्रणाम।
परम शान्ति रसपान करूँ मैं, पाऊँ शाश्वत निज ध्रुवधाम।।

ॐ ह्रीं श्री अढाईद्वीपस्थ-सर्वकृत्रिमजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक की सर्व जिन-प्रतिमाओं को अर्घ्य

तीन लोक की सर्व कृत्रिम-अकृत्रिम प्रतिमायें वन्दूँ।
भावसहित सबकी पूजन कर, राग-द्वेष कल्मष हर लूँ।।

ॐ ह्रीं श्री कृत्रिमाकृत्रिमजिनालयान्तर्गतसर्वजिनप्रतिमाभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी को अर्घ्य

द्वादश अंग पूर्व चौदह से, शोभित है श्री जिनवाणी।
सूत्र चूलिका प्रकीर्णक, परिकर्म विभूषित कल्याणी।।
है प्रथमानुयोग अति मनहर, पाप-पुण्य फल तथा प्रधान।
त्रैसठ महाशलाका पुरुषों का, चारित्र जु श्रेष्ठ महान।।
है करणानुयोग अति पावन, तीन लोक का सत्यस्वरूप।
जीवों के परिणाम मार्गणा, गुणस्थान का ज्ञान अनूप।।
है चरणानुयोग में श्रावक, मुनियों का आचरण महान।
अन्तरंग भावों के ही, अनुसार बाह्य आचरण प्रधान।।
है द्रव्यानुयोग में सच्चा, उत्तम स्वरूप कथन।
छह द्रव्यों अरु सात तत्त्व, अरु नवपदार्थ का है वर्णन।।
सबके भेद-प्रभेद अनेकों, जिनश्रुत महिमा अपरम्पार।
माता जिनवाणी को वन्दन, नमन करूँ मैं बारम्बार।।
सतत शान्ति की प्राप्ति हेतु मैं, स्वाध्याय का नियम करूँ।
वीतराग-विज्ञान किरण पा, मिथ्या भ्रम का वमन करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वपूज्यजिनवाणी द्वादशाङ्गायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनधर्म को अर्घ्य

वस्तु-स्वभाव स्वधर्म है, जिनवाणी उपदेश।
आत्मधर्म जु सर्वोत्तम, यही धर्म सन्देश।।

ॐ ह्रीं श्री शाश्वतजिनधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण भावनाओं को अर्घ्य

(वीर)

षोडशकारण भव्य भावनाएँ, मैं प्रभु भाऊँ तत्काल।
त्रिभुवन में सर्वोत्कृष्ट, तीर्थंकर पद दाता सुविशाल।।
दर्शविशुद्धि भावना के बिन, शेष भावनाएँ हैं व्यर्थ।
पहली दर्शविशुद्धि है, भव-रोगों की औषधि सार्थ।।

दूजी विनय भावना तीजी, शील भावना सुखकारी।
है अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग, संवेगभाव है हितकारी।।
शक्तिपूर्वक त्याग जानिए, शक्तिपूर्वक तप करिये।
साधुसमाधि भावना सुखमय, वैय्यावृत्तिकरण धरिये।।
अर्हदभक्ति करूँ मंगलमय, आचार्यों की भक्ति करूँ।
बहुश्रुतभक्ति हृदय में धारूँ, प्रवचनभक्ति सदैव करूँ।।
आवश्यक अपरिहाणि भावना, मार्गप्रभावना हे जिन हो।
वात्सल्य भावना हृदय धरो, सोलहकारण जिनवर हो।।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्तिभाव से, परम शान्ति पाऊँ स्वामी।
तीर्थंकर पद लक्ष्य छोड़कर, आत्मलक्ष्य पाऊँ नामी।।

ॐ ह्रीं श्री षोडशकारणभावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण धर्म को अर्घ्य

(सार-जोगीरासा)

उत्तम क्षमाधर्म उर धारूँ, और कषाय निवारूँ।
उत्तम मार्दवधर्म ग्रहण कर, विनय स्वरूप निहारूँ।।
उत्तम आर्जवधर्म धार उर, माया कषाय संहारूँ।
उत्तम सत्यस्वरूप स्वयं का, सत्यधर्म उर धारूँ।।
उत्तम शौचधर्म उर धर कर, लोभकषाय निवारूँ।
उत्तम संयम षट्कायिक, जीवों पर करुणा धारूँ।।
उत्तम तप धर शुक्लध्यान से, अष्ट कर्म सब जारूँ।
उत्तम त्याग पंच पापों को, पूर्णतया संहारूँ।।
उत्तम आकिंचन अपरिग्रह, पूर्ण हृदय में लाऊँ।
उत्तम ब्रह्मचर्य उर धारूँ, महाशील गुण पाऊँ।।
दश धर्मों का पालन करके, मुक्ति-भवन में जाऊँ।
सादि-अनन्त शान्ति सुखसागर, अन्तर में लहराऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय धर्म को अर्घ्य

(वीर)

जय जय सम्यग्दर्शन पावन, मिथ्या भ्रम-नाशक श्रद्धान।
जय जय सम्यग्ज्ञान तमहर, जय जय वीतराग-विज्ञान।।
जय जय सम्यग्चारित्र निर्मल, मोह-क्षोभ हर महिमावान।
अनुपम रत्नत्रय धारण कर, मोक्षमार्ग पर करूँ प्रयाण।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन को अर्घ्य

आत्मतत्त्व की प्रतीति निश्चय, सात तत्त्व श्रद्धा व्यवहार।
सम्यग्दर्शन से हो जाते, भव्य जीव भवसागर पार।।
विपरीताभिनिवेश रहित, समकित अधिगमज-निसर्गज सार।
औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम, होता है यह तीन प्रकार।।
जय जय सम्यग्दर्शन आठों, अंगसहित अनुपम सुखकार।
यही धर्म का सुदृढ़ मूल है, परम शान्ति दाता शिवकार।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्दर्शनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान को अर्घ्य

निज अभेद का ज्ञान सुनिश्चय, आठ भेद सब हैं व्यवहार।
सम्यग्ज्ञान परम हितकारी, शिवसुख दाता मंगलकार।।
जय जय सम्यग्ज्ञान अष्ट, अंगों से युक्त मोक्ष सुखकार।
परम शान्ति का मूल यही है, शिवसुख दाता अपरम्पार।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्ज्ञानायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्चारित्र को अर्घ्य

निजस्वरूप में रमण सुनिश्चय, दो प्रकार चारित्र व्यवहार।
श्रावक त्रेपन क्रिया साधु का, तेरह विध चारित्राधार।।
श्रेष्ठ धर्म है श्रेष्ठ मार्ग है, श्रेष्ठ सुमुनि पद शिवसुखकार।
सम्यक्चारित्र बिना न कोई, पा सकता है शान्ति अपार।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्चारित्रायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तिम महार्घ्य

(मानव)

जीवत्वशक्ति के स्वामी, ध्रुव ज्ञायक ज्ञाता ज्ञानी।
श्री महावीरस्वामी की, तुमने ना एक भी मानी।।
हे मेरे चेतन बोलो, कानों में अमृत घोलो।
तुम कौन कहाँ से आए, अब तक हो क्यों अज्ञानी।।
अब शिवपथ पर ही चलना, आठों कर्मों को दलना।
निज की छाया में पलना, जो हैं प्रसिद्ध लासानी।।
विज्ञान-ज्ञान के द्वारा, कट जाती भव-दुःखकारा।
कर्मों के बन्धन काटो, बन वीतराग-विज्ञानी।।
तुम स्वपर प्रकाशक नामी, तुम ही हो अन्तर्यामी।
सारे विभाव तुम नाशो, तुम करो न अब नादानी।।
रागादि भाव को तज कर, पर के ममत्व को जीतो।
शुद्धात्मतत्त्व निज ध्या लो, बन जाओ केवलज्ञानी।।
है शुक्लध्यान की बेला, है गुण अनन्त का मेला।
तुम भूल न जाना शिवपथ, तुम तो हो ज्ञानी-ध्यानी।।
अन्तिम अपूर्व अवसर है, तुम चूक न जाना चेतन।
चैतन्य भावना भाना, मत बनना तुम अभिमानी।।
नवदेवों की पूजन कर, जागा सौभाग्य तुम्हारा।
पर्यायदृष्टि को तज कर, समकित की महिमा जानी।।
अब द्रव्यदृष्टि बन जाओ, तो परम शान्ति पाओगे।
लो लक्ष्य त्रिकाली ध्रुव का, कहती है श्री जिनवाणी।।

(दोहा)

महार्घ्य अर्पण करूँ, श्री नवदेव महान।
सम्यग्दर्शन प्राप्त कर, करूँ कर्म अवसान।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाजयमाला

(समानसवैया)

शिवद्वारे अरहन्त खड़े हैं, सिद्ध बुलाते भीतर आओ।
सकुचाहट अघाति की नाशो, अपने पावन चरण बढ़ाओ।।
मुक्ति-वधू वरमाला लिये है, वन्दनवारे सजी सिद्धि की।
पूर्ण शुद्धता तुम्हें मिली है, दर्शन-ज्ञानमयी विशुद्धि की।।
निःसंकोच बढ़े यह सुनकर, श्री अरहन्त त्रिलोकाग्र पर।
सिद्धशिला सिंहासन पाया, हुए सदा को ही स्वमुक्ति वर।।
सप्त स्वरों में इन्द्र सुरों ने, गाए गीत सहज अवनी पर।
नाच उठा गगनांगन सर-सर, नीचे सागर निर्झर झर-झर।।
भव्य जीव पुलकित हैं उर में, मुक्तिमार्ग भी सरल हो गया।
जो स्वभाव से दूर बसे हैं, उनको शिवपथ विरल हो गया।।
सर्व ज्ञेय-ज्ञाता होकर भी, निजानन्द रस लीन हो गए।
गुण अनन्त प्रगटा कर अपने, ज्ञानोदधि तल्लीन हो गए।।
विरुदावली विश्व गाता है, चौंसठ यक्ष ढोरते चामर।
शत इन्द्रों से वन्दित है प्रभु, चिदानन्द चेतन नट नागर।।
समवशरण वैभव ठुकराया, दिव्यध्वनि की भाषा छोड़ी।
कर्मप्रकृतियाँ सगरी तोड़ी, नित्य निरंजन चादर ओढ़ी।।
अब तो शिवसुख ही शिवसुख है, दुःख का नाम निशान नहीं है।
शिवसुख सागरमयी हो गए कहीं दुःखों का नाम नहीं है।।
अखिल विश्व में नमः सिद्ध का, गूँजा जय जय नाद मनोहर।
निज पुरुषार्थ शक्ति से पायी, अपनी पावन शुद्ध धरोहर।।
परम शान्ति की गंगा प्रभु के, चरण पखार रही है पावन।
परम शान्ति का सागर प्रभु, अभिषेक कर रहा है मनभावन।।
भव्यों का सौभाग्य जगा है, जिनगुण-सम्पत्ति निकट आ गई।
विपदाओं की काली बदली, स्वयं विलय हो त्वरित उड़ गई।।

(दोहा)

नवदेवों को पूजकर, हर्षित सकल समाज।
समकित का धन प्राप्त कर, सफल हुए सब काज।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तिपाठ

(दोहा)

मंगलमय परमेष्ठी, पाँचों शान्तिस्वरूप।
अर्हंत सिद्धाचार्य प्रभु, पाठक साधु अनूप।।
मंगलमय जिनमूर्ति है, मंगलमय जिनगेह।
मंगल जिनवाणी परम, मंगल धर्म सनेह।।
दु:खी न हो कोई कभी, सुखी रहें सब जीव।
परमशान्ति पाएँ प्रभो, ध्यावें तुम्हें सदीव।।
पूर्ण शान्ति हो विश्व में, सबका हो कल्याण।
यही भावना है प्रभो, हे नवदेव महान।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें।)

क्षमापना

(चौपाई)

भूलें क्षमा करो भगवान, हम तो सेवक सदा अजान।।
हमें करो प्रभु सुमित प्रदान, हम भी पाएँ सम्यग्ज्ञान।।
सुख सम्पत्ति सौभाग्य मिले, हृदय ज्ञान का कमल खिले।।
शान्ति विधान हुआ सम्पूर्ण, सहज शान्ति पाएँ आपूर्ण।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

-●-